अध्याय 5

औरतों ने बदली दुनिया

0765CH05

पिछले अध्याय में हमने देखा कि किस तरह महिलाओं द्वारा किया जाने वाला घर का काम, काम ही नहीं माना जाता है। हमने यह भी पढ़ा कि घरेलू काम और परिवार के सदस्यों की देखभाल करना पूरे समय का काम है और इस कार्य को प्रारंभ और समाप्त करने का कोई निश्चित समय भी नहीं है। इस अध्याय में हम घर के बाहर के कामों को देखेंगे और समझेंगे कि कैसे कुछ व्यवसाय महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों के लिए अधिक उपयुक्त समझे जाते हैं। हम यह भी ज्ञात करेंगे कि समानता प्राप्त करने के लिए स्त्रियों ने कैसे संघर्ष किए। पहले भी और आज भी शिक्षा प्राप्त करना एक ऐसा तरीका है, जिससे महिलाओं के लिए नए अवसर निर्मित किए जा सकते हैं। साथ ही इस अध्याय में हम हाल के वर्षों में महिला आंदोलनों द्वारा भेदभाव को चुनौती देने के लिए किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के प्रयत्नों के बारे में भी संक्षेप में जानेंगे।

© NCERT not to be republished

कौन क्या काम करता है?

निम्नलिखित लोगों के चित्र बनाइए –

एक किसान

एक मिल मज़दूर

एक नर्स

एक वैज्ञानिक

एक पायलट

एक शिक्षक

चलिए, अब आपकी कक्षा द्वारा बनाए गए चित्रों को देखने के लिए नीचे दी गई तालिका को भरिए। अब हर व्यवसाय के लिए पुरुषों और महिलाओं के चित्रों को अलग-अलग जोड़िए।

वर्ग	पुरुष चित्र	महिला चित्र
शिक्षक		
किसान		
मिल मज़दूर		
नर्स		
वैज्ञानिक		
पायलट		

क्या महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों के चित्र अधिक हैं?

किस प्रकार के व्यवसायों में स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों के चित्र अधिक हैं?

क्या सबने नर्स के लिए महिला का ही चित्र बनाया है? क्यों?

क्या महिला किसानों के चित्र तुलनात्मक रूप से कम हैं? यदि हैं, तो क्यों?

© NCERT not to be republished

भारत में 83.6 प्रतिशत महिलाएँ खेतों में काम करती हैं। उनके काम में पौधे रोपना, खरपतवार निकालना, फ़सल काटना और कुटाई करना शामिल हैं। फिर भी जब हम किसान के बारे में सोचते हैं, तो हम एक पुरुष के बारे में ही सोचते हैं।

(स्रोत – 61वाँ नेशनल सैंपल सर्वे, 2004–05)

अपनी कक्षा में किए गए अभ्यास की तुलना रोज़ी मैडम की कक्षा के अभ्यास से करिए।

रोज़ी मैडम की कक्षा में तीस बच्चे हैं। उन्होंने अपनी कक्षा में यही अभ्यास कराया। परिणाम इस प्रकार रहे –

वर्ग	पुरुष चित्र	महिला चित्र
शिक्षक	05	25
किसान	30	0
मिल मज़दूर	25	05
नर्स	0	30
वैज्ञानिक	25	05
पायलट	27	03

कम अवसर और कठोर अपेक्षाएँ

रोज़ी मैडम की कक्षा के अधिकांश बच्चों ने नर्स के लिए महिलाओं के और पायलट के रूप में पुरुषों के चित्र बनाए। ऐसा उन्होंने इस कारण किया कि उन्हें लगता है कि घर के बाहर भी महिलाएँ कुछ खास तरह के काम ही अच्छी तरह कर सकती हैं। उदाहरण के लिए बहुत-से लोग मानते हैं कि महिलाएँ अच्छी नर्सें हो सकती हैं,

© NCERT not to be republished

क्योंकि वे अधिक सहनशील और विनम्र होती हैं। इसे परिवार में स्त्रियों की भूमिका के साथ मिला कर देखा जाता है। इसी प्रकार से माना जाता है कि विज्ञान के लिए तकनीकी दिमाग की ज़रूरत होती है और लड़कियाँ और महिलाएँ तकनीकी कार्य करने में सक्षम नहीं होती।

अनेक लोग इस प्रकार की **रूढ़िवादी** धारणाओं में विश्वास करते हैं। इसलिए बहुत-सी लड़कियों को डॉक्टर व इंजीनियर बनने के लिए अध्ययन करने और प्रशिक्षण लेने के लिए वह सहयोग नहीं मिल पाता है, जो लड़कों को मिलता है। अधिकांश परिवारों में स्कूली शिक्षा पूरी हो जाने के बाद लड़कियों को इस बात के लिए प्रेरित किया जाता है कि वे शादी को अपने जीवन का मुख्य लक्ष्य मान लें।

यह समझना आवश्यक है कि हम ऐसे समाज में रह रहे हैं, जहाँ सभी बच्चों को अपने चारों ओर की दुनिया के दबावों का सामना करना पड़ता है। कभी यह दबाव बड़ों की अपेक्षाओं के रूप में होता है, तो कभी यह हमारे अपने ही मित्रों के गलत तरीके से चिढ़ाने के कारण पैदा हो जाता है। लड़कों पर ऐसी

रूढ़ियों को तोड़ा है

रेल का इंजन आदमी चलाते हैं। पर झारखंड के एक गरीब आदिवासी परिवार की 27 वर्षीय महिला लक्ष्मी लाकरा ने इस धारा का रुख बदल दिया है। उत्तरी रेलवे की वह पहली महिला इंजन चालक है।

लक्ष्मी के माता-पिता पढ़े-लिखे नहीं हैं, पर उन्होंने अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए बहुत संघर्ष किया। लक्ष्मी की शिक्षा एक सरकारी स्कूल में हुई। स्कूल में पढ़ने के साथ-साथ लक्ष्मी घर के कामों व अन्य ज़िम्मेदारियों में हाथ भी बँटाती रही। उसने मन लगाकर और मेहनत से पढ़ाई की और स्कूल पूरा करके इलेक्ट्रॉनिक्स में डिप्लोमा अर्जित किया। फिर वह रेलवे बोर्ड की परीक्षा में बैठी और पहली ही कोशिश में उत्तीर्ण हो गई।

लक्ष्मी कहती है, "मुझे चुनौतियों से खेलना पसंद है और जैसे ही कोई यह कहता है कि फलाँ काम लड़कियों के लिए नहीं है, मैं उसे करके रहती हूँ।" लक्ष्मी के जीवन में ऐसा करने के अनेक अवसर आए। जब वह इलेक्ट्रॉनिक्स करना चाहती थी, जब उसने पॉलीटेक्नीक में मोटर साइकिल चलाई और जब उसने तय किया कि वह इंजन ड्राइवर बनेगी।

उसका दृष्टिकोण सीधा-सादा है—जब तक मुझे मज़ा आ रहा है और मैं किसी को नुकसान नहीं पहुँचा रही और मैं अच्छे से रह पा रही हूँ और अपने माता-पिता की मदद कर पा रही हूँ तो मैं अपने तरीके से क्यों न जीऊँ?"

(ड्राइविंग हर ट्रेन, नीता लाल, *वीमेन्स फ़ीचर सर्विस* से रूपांतरित*)*

© NCERT not to be republished

नीचे दी गई कहानी को पढ़िए और उसके बाद दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

यदि आप ज़ेवियर होते, तो कौन-से विषय चुनते?

अपने अनुभव के आधार पर बताइए कि लड़कों को ऐसे किन-किन दबावों का सामना करना पड़ता है?

नौकरी प्राप्त करने के लिए दबाव होता है, जिसमें उन्हें अधिक वेतन मिले। यदि वे दूसरे लड़कों की तरह व्यवहार नहीं करते हैं, तो उन्हें चिढ़ाया जाता है और धौंस दी जाती है। आपको याद होगा कि कक्षा 6 की पुस्तक में आपने पढ़ा था कि लड़कों को बचपन से ही दूसरों के सामने रोने पर चिढ़ाया जाता है।

परिवर्तन के लिए सीखना

स्कूल जाना आपके जीवन का बहुत महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। जैसे-जैसे स्कूलों में हर साल अधिकाधिक संख्या में बच्चे प्रवेश ले रहे हैं, हम

ज़ेवियर अपना दसवीं बोर्ड का परीक्षाफल देख कर खुश था। यद्यपि विज्ञान और गणित में उसे बहुत अधिक अंक नहीं मिले थे, लेकिन अपने पसंदीदा विषय इतिहास और भाषाओं में उसने अच्छा किया था। जब उसके माता-पिता ने परिणाम देखे, तो वे खुश नहीं हुए...

रमाबाई (1858-1922) अपनी बेटी के साथ। महिला-शिक्षा की ये योद्धा स्वयं कभी स्कूल नहीं गईं, पर अपने माता-पिता से उन्होंने पढ़ना-लिखना सीख लिया। उन्हें पंडिता की उपाधि दी गई, क्योंकि वे संस्कृत पढ़ना-लिखना जानती थीं; जो उस समय की औरतों के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि थी। औरतों को तब यह ज्ञान अर्जित करने की अनुमति नहीं थी। उन्होंने 1898 में, पुणे के पास खेड़गाँव में एक मिशन स्थापित किया, जहाँ विधवा स्त्रियों और गरीब औरतों को पढ़ने-लिखने तथा स्वतंत्र होने की शिक्षा दी जाती थी। उन्हें लकड़ी से चीजें बनाने, छापाखाना चलाने जैसी कुशलताएँ भी सिखाई जाती थीं जो वर्तमान में भी लड़कियों को कम ही सिखाई जाती हैं। ऊपर बाएँ हाथ की तरफ़ छपी तसवीर में उनका छापाखाना दिख रहा है। रमाबाई का मिशन आज भी सक्रिय है।

सोचने लगे हैं कि सब बच्चों के लिए स्कूल जाना एक साधारण बात है। आज हमारे लिए यह कल्पना करना भी कठिन है कि कुछ बच्चों के लिए स्कूल जाना और पढ़ना 'पहुँच के बाहर' की बात या 'अनुचित' बात भी मानी जा सकती है। परंतु अतीत में लिखना और पढ़ना कुछ लोग ही जानते थे। अधिकांश बच्चे वही काम सीखते थे, जो उनके परिवार में होता था या उनके बुज़ुर्ग करते थे। लड़कियों की स्थिति और भी खराब थी। उन समाजों में जहाँ लड़कों को पढ़ना-लिखना सिखाया जाता था, लड़कियों को अक्षर तक सीखने की अनुमति नहीं थी। यहाँ तक कि उन परिवारों में भी जहाँ कुम्हारी, बुनकरी (वस्त्र बुनना) और हस्तकला सिखाई जाती थी, यह धारणा थी कि लड़कियों और औरतों का काम केवल सहायता करने तक ही सीमित है। उदाहरण के लिए – कुम्हार के व्यवसाय में स्त्रियाँ मिट्टी एकत्र करती थीं और बर्तन बनाने के लिए उसे तैयार करती थीं। चूँकि वे चाक नहीं चलाती थीं, इसलिए उन्हें कुम्हार नहीं माना जाता था।

19वीं शताब्दी में (लगभग 200 वर्ष पूर्व) शिक्षा के बारे में कई नए विचारों ने जन्म लिया। विद्यालय अधिक प्रचलन में आ गए और वे समाज, जिन्होंने स्वयं कभी पढ़ना-लिखना नहीं सीखा था, अपने बच्चों को स्कूल भेजने लगे। तब भी लड़कियों की शिक्षा को लेकर बहुत विरोध हुआ। इसके बावजूद, बहुत-सी स्त्रियों और पुरुषों ने बालिकाओं के लिए स्कूल खोलने के प्रयत्न किए। स्त्रियों ने पढ़ना-लिखना सीखने के लिए संघर्ष किया।

आइए, हम राससुंदरी देवी (1800-1890) का अनुभव पढ़ें, जो दो सौ वर्ष पूर्व पश्चिमी बंगाल में पैदा हुई थीं। साठ वर्ष की अवस्था में उन्होंने बांग्ला भाषा में अपनी आत्मकथा लिखी। उनकी पुस्तक

शिक्षा प्राप्त करके कुछ महिलाओं ने समाज में स्त्रियों की स्थिति के बारे में प्रश्न उठाए। उन्होंने असमानता के अपने अनुभवों का वर्णन करते हुए कहानियाँ, पत्र और आत्मकथाएँ लिखीं। अपने लेखों में उन्होंने स्त्री और पुरुष दोनों के लिए सोचने और जीने के नए-नए तरीकों की कल्पना की।

आमार जीबोन किसी भारतीय महिला द्वारा लिखित पहली आत्मकथा है। राससुंदरी देवी एक धनवान जमींदार परिवार की गृहिणी थीं। उस समय लोगों का विश्वास था कि यदि लड़की लिखती-पढ़ती है, तो वह पति के लिए दुर्भाग्य लाती है और विधवा हो जाती है। इसके बावजूद उन्होंने अपनी शादी के बहुत समय बाद स्वयं ही छुप-छुपकर लिखना-पढ़ना सीखा।

"मैं अत्यंत सबेरे ही काम करना शुरू कर देती थी और उधर आधी रात हो जाने के बाद भी काम में लगी रहती थी। बीच में भी विश्राम नहीं होता था। उस समय मैं केवल चौदह वर्ष की थी। मेरे मन में एक अभिलाषा पनपने लगी- मैं पढ़ना सीखूँगी और एक धार्मिक पांडुलिपि पढ़ूँगी। मैं अभागी थी। उन दिनों स्त्रियों को नहीं पढ़ाया जाता था। बाद में मैं स्वयं ही अपने विचारों का विरोध करने लगी। मुझे क्या हो गया है? स्त्रियाँ पढ़ती नहीं हैं, फिर मैं कैसे पढ़ूँगी? फिर मुझे एक स्वप्न आया - मैं *चैतन्य भागवत* (एक संत

रुकैया सखावत हुसैन और लेडीलैंड का उनका सपना

रुकैया सखावत हुसैन (1880-1932) एक धनी परिवार में पैदा हुई थीं, जिसके पास बहुत ज़मीन थी। यद्यपि उन्हें उर्दू पढ़ना और लिखना आता था, परंतु उन्हें बांग्ला और अंग्रेज़ी सीखने से रोका गया। उस समय अंग्रेज़ी को ऐसी भाषा के रूप में देखा जाता था, जो लड़कियों के सामने नए विचार रखती थी। जिन्हें लोग लड़कियों के लिए ठीक नहीं मानते थे। इसलिए अंग्रेज़ी अधिकतर लड़कों को ही पढ़ाई जाती थी। रुकैया ने अपने बड़े भाई और बहन के सहयोग से बांग्ला और अंग्रेज़ी पढ़ना और लिखना सीखा। आगे जाकर वे एक लेखिका बनीं। 1905 में जब वे केवल पच्चीस वर्ष की थीं अंग्रेज़ी भाषा के कौशल का अभ्यास करने के लिए उन्होंने एक उल्लेखनीय कहानी लिखी, जिसका शीर्षक था *सुल्ताना का स्वप्न*। कहानी में सुल्ताना नामक एक स्त्री की कल्पना की गई थी, जो *लेडीलैंड* नाम की एक जगह पहुँचती है। लेडीलैंड ऐसा स्थान था, जहाँ पर स्त्रियों को पढ़ने, काम करने और आविष्कार करने की स्वतंत्रता थी। इस कहानी में महिलाएँ बादलों से होने वाली वर्षा को रोकने के उपाय खोजती हैं और हवाई कारें चलाती हैं। लेडीलैंड में पुरुषों की आक्रामक बंदूकें और युद्ध के अन्य अस्त्र-शस्त्र, स्त्रियों की बौद्धिक शक्ति से हरा दिए जाते हैं और पुरुष एक अलग-थलग स्थान में भेज दिए जाते हैं। सुल्ताना, लेडीलैंड में अपनी बहन साराह के साथ यात्रा पर जाती है, तभी उसकी आँख खुल जाती है और उसे पता चलता है कि वह तो केवल स्वप्न देख रही थी।

जैसाकि आपने देखा रुकैया सखावत हुसैन उस समय स्त्रियों के हवाई जहाज और कारें चलाने का स्वप्न देख रहीं थीं, जब लड़कियों को स्कूल तक जाने की अनुमति नहीं थी। इस तरह से शिक्षा ने रुकैया का जीवन बदल दिया। रुकैया केवल स्वयं शिक्षित होकर संतुष्ट नहीं हुईं। उनकी शिक्षा ने उन्हें स्वप्न देखने और लिखने की ही शक्ति नहीं दी, वरन् उससे भी अधिक करने की शक्ति दी। 1910 में उन्होंने कोलकाता में लड़कियों के लिए एक स्कूल खोला, जो आज भी कार्य कर रहा है।

© NCERT not to be republished

का जीवन) पढ़ रही थी। बाद में दिन के समय जब मैं रसोई में बैठी हुई भोजन बना रही थी, मैंने अपने पति को सबसे बड़े बेटे से कहते हुए सुना– "बिपिन! मैंने अपनी *चैतन्य भागवत* यहाँ छोड़ी है। जब मैं इसे मँगाऊँ, तुम इसे अंदर ले आना।" वे पुस्तक वहीं छोड़कर चले गए। जब पुस्तक अंदर रख दी गई, मैंने चुपके से उसका एक पन्ना निकाल लिया और सावधानी से उसे छुपा दिया। उसे छुपाना भी एक बड़ा काम था, क्योंकि किसी को भी वह मेरे हाथ में नहीं दिखना चाहिए था। मेरा सबसे बड़ा बेटा उस समय ताड़ के पत्तों पर लिखकर अक्षर बनाने का अभ्यास कर रहा था। उसमें से भी मैंने एक छिपा दिया। जब मौका मिलता, मैं जाती और उस पन्ने के अक्षरों का मिलान अपने याद किए गए अक्षरों से करती। मैंने उन शब्दों का भी मिलान करने की कोशिश की, जो मैं दिन–भर में सुनती रहती थी। अत्यधिक जतन और कोशिशों से एक लंबे समय के बाद मैं पढ़ना सीख सकी।"

*राससुंदरी देवी और रुकैया हुसैन जिन्हें पढ़ने–लिखने की अनुमति नहीं मिली थी, की स्थिति के विपरीत वर्तमान समय में भारत में बड़ी संख्या में लड़कियाँ स्कूल जा रही हैं। इसके बावजूद भी बहुत-सी लड़कियाँ गरीबी, शिक्षण की सुविधाओं के अभाव और **भेदभाव** के कारण स्कूल जाना छोड़ देती हैं। सभी समाजों और वर्गों की पृष्ठभूमि वाले बच्चों को शिक्षण की समान सुविधाएँ प्रदान करना, विशेषकर लड़कियों को, आज भी भारत में एक चुनौती है।*

रास‍सुंदरी देवी के अक्षर ज्ञान ने उन्हें *चैतन्य भागवत* पढ़ने का अवसर दिया। स्वयं अपने लेखन से उन्होंने संसार को उस समय की स्त्रियों के जीवन के बारे में जानने का एक अवसर दिया। रास‍सुंदरी देवी ने अपने दैनन्दिन जीवन के अनुभवों को विस्तार से लिखा है। ऐसे भी दिन होते थे, जब उन्हें दिनभर में क्षण–भर का भी विश्राम नहीं मिलता था इतना समय भी नहीं कि वे ज़रा बैठकर कुछ खा ही लें।

वर्तमान समय में शिक्षा और विद्यालय

आज के युग में लड़के और लड़कियाँ विशाल संख्या में विद्यालय जा रहे हैं, लेकिन फिर भी हम देखते हैं कि लड़कों और लड़कियों की शिक्षा में अंतर है। भारत में हर दस वर्ष में जनगणना होती है, जिसमें पूरे देश की जनसंख्या की गणना की जाती है। इसमें भारत में रहने वालों के जीवन के बारे में भी विस्तृत जानकारी एकत्रित की जाती है, जैसे – उनकी आयु, पढ़ाई, उनके द्वारा किए जाने वाले काम, आदि। इस जानकारी का इस्तेमाल हम अनेक बातों के आकलन के लिए करते हैं, जैसे – शिक्षित लोगों की संख्या तथा स्त्री और पुरुषों का अनुपात। 1961 की जनगणना के अनुसार सब लड़कों और पुरुषों (7 वर्ष एवं उससे अधिक आयु के) का 40 प्रतिशत शिक्षित था (अर्थात् वे कम–से–कम अपना नाम लिख सकते थे)। इसकी

सतत विकास लक्ष्य 4: गुणवत्तापूर्ण शिक्षा
www.in.undp.org

© NCERT not to be republished

तुलना में लड़कियों तथा स्त्रियों का केवल 15 प्रतिशत भाग शिक्षित था। 2011 की जनगणना के अनुसार लड़कों व पुरुषों की यह संख्या बढ़कर 82 प्रतिशत हो गई है और शिक्षित लड़कियों तथा स्त्रियों की संख्या 65 प्रतिशत। इसका आशय यह हुआ कि पुरुषों और स्त्रियों, दोनों के बीच ऐसे लोगों का अनुपात बढ़ गया है, जो पढ़-लिख सकते हैं और जिन्हें कुछ हद तक शिक्षा मिल चुकी है। लेकिन जैसाकि आप देख सकते हैं, अब भी स्त्रियों की तुलना में पुरुषों का प्रतिशत अधिक है। इनके बीच का अंतर अभी समाप्त नहीं हुआ है।

नीचे दी गई तालिका में विभिन्न वर्गों के उन लड़कों व लड़कियों का प्रतिशत दर्शाया गया है, जो बीच में ही विद्यालय छोड़ देते हैं। अनुसूचित जाति (SC) और अनुसूचित जनजाति (ST) के लड़के और लड़कियाँ इनमें शामिल हैं।

स्कूल शिक्षा में औसत वार्षिक ड्रॉप-आउट दर (2014-15)

(प्रतिशत में)

स्कूल का स्तर	सब			अनु.जा.			अनु.जन.जा.		
	लड़के	लड़कियाँ	योग	लड़के	लड़कियाँ	योग	लड़के	लड़कियाँ	योग
प्राथमिक (कक्षा 1 से 5)	4.36	3.88	4.13	4.71	4.20	4.46	7.02	6.84	6.93
उच्च प्राथमिक (कक्षा 6 से 8)	3.49	4.60	4.03	5.00	6.03	5.51	8.48	8.71	8.59
माध्यमिक (कक्षा 9 से 10)	17.21	16.88	17.06	19.64	19.05	19.36	24.94	24.40	24.68

स्रोत – Educational Statistics at a Glance, MHRD, 2018

उच्च प्राथमिक स्तर पर कितने बच्चे स्कूल छोड़ देते हैं?

शिक्षा के किस स्तर पर आपको सर्वाधिक बच्चे स्कूल छोड़ते हुए दिखाई देते हैं?

आपके विचार में अन्य सभी वर्गों की तुलना में, आदिवासी लड़के-लड़कियों की विद्यालय छोड़ने की दर अधिक क्यों है?

संभवतः आपने ऊपर दी गई तालिका में इस बात पर ध्यान दिया होगा कि 'सब लड़कियों' की श्रेणी की तुलना में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की लड़कियों की स्कूल छोड़ने की दर अधिक है। इसका अर्थ यह हुआ कि दलित व आदिवासी पृष्ठभूमि की लड़कियों के स्कूल में रहने की संभावना कम रहती है। वर्ष 2011 की जनगणना से यह भी पता चलता है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति लड़कियों की अपेक्षा मुस्लिम लड़कियों की प्राथमिक शिक्षा पूरी करने की संभावना और भी कम रहती है। मुस्लिम लड़कियाँ स्कूल में लगभग 3 वर्ष रह पाती हैं, जबकि अन्य समुदायों की लड़कियाँ स्कूल में 4 वर्ष का समय बिता पा रही है।

दलित, आदिवासी और मुस्लिम वर्ग के बच्चों के स्कूल छोड़ देने के अनेक कारण हैं। देश के अनेक भागों में विशेषकर ग्रामीण और गरीब क्षेत्रों में नियमित रूप से पढ़ाने के लिए न उचित स्कूल हैं, न ही शिक्षक। यदि विद्यालय घर के पास न हो और लाने-ले जाने के

© NCERT not to be republished

लिए किसी साधन जैसे बस या वैन आदि की व्यवस्था न हो तो अभिभावक लड़कियों को स्कूल नहीं भेजना चाहते। कुछ परिवार अत्यंत निर्धन होते हैं और अपने सब बच्चों को पढ़ाने का खर्चा नहीं उठा पाते हैं। ऐसी स्थिति में लड़कों को प्राथमिकता मिल सकती है। बहुत-से बच्चे इसलिए भी स्कूल छोड़ देते हैं, क्योंकि उनके साथ उनके शिक्षक और सहपाठी भेदभाव करते हैं, जैसा कि ओमप्रकाश वाल्मीकि के साथ हुआ।

2014 में शुरु हुई 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' अभियान के बारे में पता करें।

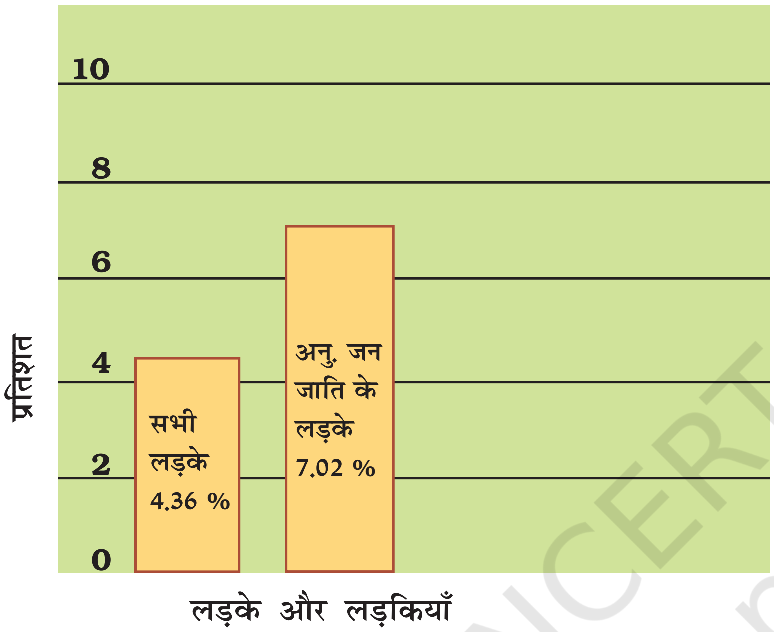

प्राथमिक कक्षाओं में स्कूल छोड़ देने वाले बच्चों के आँकड़ों को ऊपर दी गई तालिका में से लेकर दंडारेख के रूप में दर्शाइए। दो आँकड़े आपके लिए दंडारेख के रूप में दर्शाए गए हैं।

महिला आंदोलन

अब महिलाओं और लड़कियों को पढ़ने का और स्कूल जाने का अधिकार है। अन्य क्षेत्र भी हैं- जैसे कानूनी सुधार, हिंसा और स्वास्थ्य, जहाँ लड़कियों और महिलाओं की स्थिति बेहतर हुई है। ये परिवर्तन अपने-आप नहीं आए हैं। औरतों ने व्यक्तिगत स्तर पर और आपस में मिल कर इन परिवर्तनों के लिए संघर्ष किए हैं। इन संघर्षों को महिला आंदोलन कहा जाता है। देश के विभिन्न भागों से कई औरतें और कई महिला संगठन इस आंदोलन के हिस्से हैं। कई पुरुष भी महिला आंदोलन का समर्थन करते हैं। इस आंदोलन में जुटे लोगों की मेहनत, निष्ठा और उनकी विशेषताएँ इसे एक बहुत ही जीवंत आंदोलन बनाती हैं। इसमें चेतना जागृत करने, भेदभावों का मुकाबला करने और न्याय हासिल करने के लिए भिन्न-भिन्न रणनीतियों का उपयोग किया गया है। इनकी कुछ झलकियाँ आप यहाँ देख सकते हैं।

© NCERT not to be republished

अभियान

भेदभाव और हिंसा के विरोध में अभियान चलाना महिला आंदोलन का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। अभियानों के फलस्वरूप नए कानून भी बने हैं। सन् 2006 में एक कानून बना है, जिससे घर के अंदर शारीरिक और मानसिक हिंसा को भोग रही औरतों को कानूनी सुरक्षा दी जा सके।

इसी तरह महिला आंदोलन के अभियानों के कारण 1997 में सर्वोच्च न्यायालय ने कार्य के स्थान पर और शैक्षणिक संस्थानों में महिलाओं के साथ होने वाली **यौन प्रताड़ना** से उन्हें सुरक्षा प्रदान करने के लिए दिशा निर्देश जारी किए।

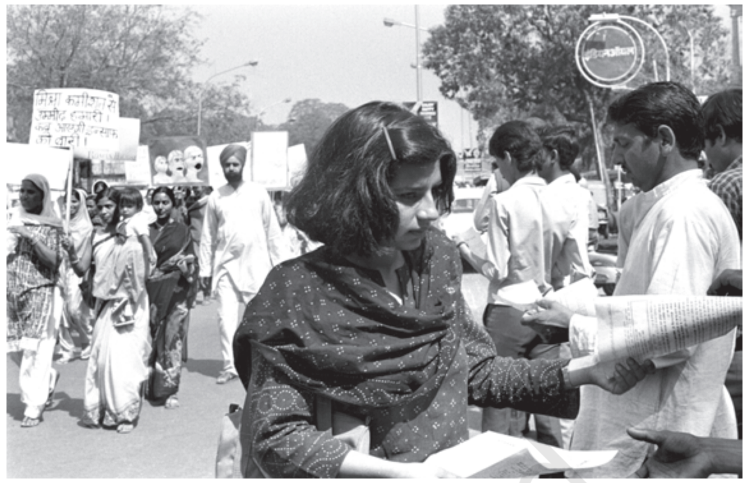

एक और उदाहरण देखें, तो 1980 के दशक में देश भर के महिला संगठनों ने दहेज हत्याओं के खिलाफ़ आवाज़ उठाई। नवविवाहित युवतियों को उनके पति और ससुराल के लोगों द्वारा दहेज के लालच में मौत के घाट उतार दिया जाता था। महिला संगठनों ने इस बात की कड़ी आलोचना करी कि कानून अपराधियों का कुछ नहीं कर पा रहा है। इस मुद्दे पर महिलाएँ सड़कों पर निकल आईं। उन्होंने आदलत के दरवाज़े खटखटाए और आपस में अनुभव व जानकारियों का आदान-प्रदान किया। अंततः यह समाज का एक बड़ा सार्वजनिक मुद्दा बन गया और अखबारों में छाने लगा। दहेज से संबंधित कानून को बदला गया, ताकि दहेज माँगने वाले परिवारों को दंडित किया जा सके।

सत्यारानी, महिला आंदोलनों की एक सक्रिय सदस्या, दहेज के लिए मार दी गई अपनी बेटी के मामले में न्याय माँगने के लिए लड़े गए लंबे मुकदमे की कानूनी फ़ाइलों से घिरी हुईं सर्वोच्च न्यायालय की सीढ़ियों पर बैठी हैं।

© NCERT not to be republished

जागरूकता बढ़ाना

औरतों के अधिकारों के संबंधों में समाज में जागरूकता बढ़ाना भी महिला आंदोलन का एक प्रमुख कार्य है। गीतों, नुक्कड़-नाटकों व जनसभाओं के माध्यम से वह अपने संदेश लोगों के बीच पहुँचाता है।

विरोध करना

जब महिलाओं के हितों का **उल्लंघन** होता है, जैसे किसी कानून अथवा नीति द्वारा, तो महिला आंदोलन ऐसे उल्लंघनों के खिलाफ़ आवाज़ उठाता है। लोगों का ध्यान खींचने के लिए रैलियाँ, प्रदर्शन आदि बहुत असरकारक तरीके हैं।

© NCERT not to be republished

बन्धुत्व व्यक्त करना

न्याय के अन्य मुद्दों व औरतों के साथ बन्धुत्व व्यक्त करना भी महिला आंदोलन का ही हिस्सा है।

हर साल 14 अगस्त को वाघा में भारत-पाकिस्तान की सीमा पर हज़ारों लोग इकट्ठा होते हैं और एक सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करते हैं। ऊपर की तसवीर में भारत और पाकिस्तान के लोगों के बीच बंधुत्व प्रदर्शित करते हुए औरतें जलती हुई मोमबत्तियाँ उठा रही हैं।

8 मार्च, अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस को दुनियाभर की औरतें अपने संघर्षों को ताज़ा करने और जश्न मनाने के लिए इकट्ठी होती हैं।

© NCERT not to be republished

अभ्यास

1. आपके विचार से महिलाओं के बारे में प्रचलित रूढ़िवादी धारणा कि वे क्या कर सकती हैं और क्या नहीं, उनके समानता के अधिकार को कैसे प्रभावित करती है?

2. कोई एक कारण बताइए जिसकी वज़ह से राससुंदरी देवी, रमाबाई और रुकैया हुसैन के लिए अक्षर ज्ञान इतना महत्त्वपूर्ण था।

3. "निर्धन बालिकाएँ पढ़ाई बीच में ही छोड़ देती हैं, क्योंकि शिक्षा में उनकी रुचि नहीं है।" पृष्ठ 17 पर दिए गए अनुच्छेद को पढ़ कर स्पष्ट कीजिए कि यह कथन सही क्यों नहीं है?

4. क्या आप महिला आंदोलन द्वारा व्यवहार में लाए जाने वाले संघर्ष के दो तरीकों के बारे में बता सकते हैं? महिलाएँ क्या कर सकती हैं और क्या नहीं, इस विषय पर आपको रूढ़ियों के विरुद्ध संघर्ष करना पड़े, तो आप पढ़े हुए तरीकों में से कौन-से तरीकों का उपयोग करेंगे? आप इसी विशेष तरीके का उपयोग क्यों करेंगे?

© NCERT not to be republished

शब्द-संकलन

रूढ़िवादी धारणा – जब हम विश्वास करने लगते हैं कि किसी विशेष धार्मिक, आर्थिक, क्षेत्रीय समूह के लोंगों की कुछ निश्चित विशेषताएँ होती ही हैं या वे केवल खास प्रकार का कार्य ही कर सकते हैं, तब रूढ़िवादी धारणाओं का जन्म होता है। जैसे इस पाठ में हमने देखा कि लड़कों और लड़कियों को अलग-अलग विषय लेने के लिए कहा गया। कारण उनकी रुचि न होकर उनका लड़का-लड़की होना था। रूढ़िवादी धारणाएँ हमें, लोगों को उनकी वैयक्तिक विशिष्टताओं के साथ देखने से रोकती हैं।

भेदभाव – भेदभाव तब होता है, जब हम लोगों के साथ समानता व आदर का व्यवहार नहीं करते हैं। यह तब होता है, जब व्यक्ति या संस्थाएँ पूर्वाग्रहों से ग्रसित होती हैं। भेदभाव तब होता है जब हम किसी के साथ अलग व्यवहार करते हैं या भेद करते हैं।

उल्लंघन – जब कोई ज़बरदस्ती कानून तोड़ता है या खुले रूप से किसी का अपमान करता है, तब हम कह सकते हैं कि उसने 'उल्लंघन' किया है।

यौन प्रताड़ना – इसका आशय औरत की इच्छा के विरुद्ध उसके साथ यौन से जुड़ी शारिरिक या मौखिक हरकतें करने से है।